P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-11* (Supplementary Issue) July- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

आरम्भिक हिन्दी कहानियों में किस्सागोई

रामयज्ञ मौर्य
एसोसिएट प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग,
मेरठ कॉलेज,
मेरठ

सारांश

कहानी अत्यन्त लोकप्रिय, सशक्त एवं जीवन्त साहित्य रूप है। हिन्दी में इसके लिये कथा, आख्यान, गल्प, किहनी, कहानी एवं किस्सा आदि शब्द मिलते हैं। आरम्भिक दौर में कहानी अलावों चौपालों के पास एकत्रित समूह में मौखिक रूप से सुनने सुनाने की परम्परा थी। इसे 'किस्सागोई' कहा गया। कुतूहल, काल्पनिकता, अतिरंजना, रोमांच, मार्मिकता, जिज्ञासा आदि किस्सागोई के तत्व हैं जो आरम्भिक हिन्दी कहानियों में भरपूर विद्यमान है। वाचिक परम्परा से निकलकर कहानी ने लिखित रूप धारण कर लिया। परन्तु किस्सागोई के अधिकांश तत्व उसमें विद्यमान रहे। प्रेमचन्द युग की तथा इसके पूर्व की कहानियों में कथात्मकता, आख्यानात्मकता और काल्पनिकता का गुण पूरी तरह विद्यमान है, जो इनके कहानीपन को बनाए रखता है। इन कहानियों में आदर्श चरित्रों की सृष्टि के लिये काल्पनिकता का सहारा लिया गया है। आरम्भिक हिन्दी कहानियाँ निश्चित रूप से किस्सागोई परम्परा में होने के कारण पाठक को चमत्कृत करती हैं और उनमें कहानी के प्रति जिज्ञासा व कौतूहल उत्पन्न करती हैं।

मुख्य शब्द : किस्सागोई, आरम्भिक हिन्दी कहानियाँ।

प्रस्तावना

इस तथ्य को स्वीकार करने में शायद ही किसी को आपत्ति हो कि हिन्दी कहानी का विकास संस्कृत के कथा साहित्य से हुआ। प्रारम्भ में हिन्दी साहित्य का मूलाधार किसी न किसी रूप में संस्कृत वाङ्गमय ही रहा। वैदिक ग्रन्थों, पुराणों, ब्राह्मण ग्रन्थों, उपनिषदों में आयी कथा–कहानियों वृहत्कथा मंजरी (गुणाढ्य) कथा सरितसागर (सोमदेव) इत्यादि कथा ग्रन्थों के साथ 'बेताल पंच विशंतिका, शुक सप्तति, सिंहासन द्वात्रिंशिका, पंचतंत्र, हितोपदेश इत्यादि का हिन्दी अनुवाद भी हुआ और इस तर्ज पर अनेक अन्य कथाओं का सृजन भी हुआ। "ये ग्रन्थ जहाँ संस्कृत और प्राकृत साहित्य के अन्तिम कालीन कथा साहित्य की धारा की दिशा सूचित करते हैं। वहाँ अपने अनुवादों द्वारा हिन्दी कथा साहित्य की नींव भी डालते हैं।"[1]

अध्ययन का उद्देश्य

आरम्भिक हिन्दी कहानियों के स्वरूप उनके गुण, निहित तत्वों को पाठकों के समक्ष लाना, कौन से ऐसे कारक तत्व रहे हैं जिनसे हिन्दी कहानियाँ अपने प्रारम्भिक दौर में ही लोगों के बीच अत्याधिक लोकप्रिय हो गयीं। ऐसी कहानियों की रचनात्मकता तथा कहानीपन की पडताल इस शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य है। कौन से ऐसे गुण–धर्म रहे जिनसे कहानी विधा शीघ्र ही लोक में एक सशक्त साहित्यिक विधा बन गयी।

हमारी प्राचीन कहानियों (संस्कृत काल से लेकर पालि, प्राकृत अपभ्रंश) तक में किस्सागोई के तत्वों का प्रचुर प्रयोग मिलता है या कह सकते हैं कि सभी किस्सागोई फार्म में ही थीं। अतः हम हिन्दी कहानी में किस्सागोई की उपस्थिति व उसके महत्व को नकार नही सकते। हिन्दी कहानी में किस्सागोई के रूप में विश्लेषण विवेचन के पूर्व हिन्दी कहानी के विकास क्रम की रेखा का संक्षिप्त रेखांकन समीचीन होगा।

राजनीतिक दृष्टिकोण से भारत में 11वीं शताब्दी से लेकर 17वीं शताब्दी तक का समय (लगभग 500साल) काफी उथल पुथल का रहा, निरन्तर युद्ध का ताण्डव होता रहा। मुस्लिम आक्रान्ताओं के कारण साहित्यिक परम्परायें टूट सी गयीं तथा भारतीय जीवन और साहित्य दोनों में गत्यावरोध उपस्थित हुआ। भारत में अनेक बोली भाषाओं का विकास तो हुआ पर किसी नव भारतीय भाषा में संस्कृत की सम्पूर्ण साहित्य परम्परा पूर्ण रूपेण गति न पा सकी। हिन्दी की भी यही दशा हुई। 11वीं से 13वीं शती तक हिन्दी साहित्यिक दृष्टिकोण से सामान्य है जो कुछ मिलता भी है–पद्यमय है, गद्यात्मक कुछ नही । बाद में सूफी

कवियों के प्रेम रंचनाओं में हमें आकर्षक लोक कथाएं मिलती हैं जो पद्यात्मक , गद्यात्मक और मिश्रित तीनों यहाँ रच बस गये, उनकी संस्कृति के साथ भारतीय संस्कृति का समन्वय होने लगा। इस कारण उनकी लायी हुई सहस्ररजनी चरित, शीरी फरहाद, लैला मंजनू, हजार रातें, किस्सा–चहार दरवेश, तोता मैना, छबीली भटियारिन, हातिमताई, गुलबकाबली आदि सुन्दर प्रेम प्रधान कहानियों को हमने साहित्य में उतार लिया। इसके अलावा जैसा कि हमने ऊपर बताया हमारी प्राचीन वाङ्गमय की कहानियों का भी अनुवाद और उसके तर्ज पर कुछ नया सृजन हुआ।

अंग्रेजों के आगमन और उनकी शासन सत्ता स्थापित हो जाने पर हमारे देश में एक नई सामाजिक और राजनैतिक चेतना ने अँगडाई ली। ब्रिटिश राज का विरोध अथवा उसका समर्थन दोनों ने भारतीयों को एक नयी सोच, नई दृष्टि की ओर अग्रसर किया। आजादी का बिगुल बजा साथ ही समाज सुधार के प्रयास भी प्रारम्भ हुए। आर्य समाज, प्रार्थना समाज, ब्रह्म समाज आदि कल्याणकारी संगठनों ने जनता का हृदय मन्थन कर उसको नयी जागृति दी, एक नवीन चेतना से ओत प्रोत किया। साहित्य भी एक नयी दिशा की ओर अग्रसर हुआ। अब केवल पद्य से उसका काम चलने वाला नही था। मध्ययुग के उत्तरकाल में विशेषकर उन्नीसवीं शताब्दी में गद्य का प्रचुर मात्रा में प्रयोग होने लगा। फोर्ट विलियम कालेज की स्थापना, रॉयल एशियाटिक सोसाइटी का गठन तथा ईसाई मिशनरियों के धार्मिक प्रचार से गद्य को विशेष गति मिली। इनके अलावा गद्य लेखन के स्वतंत्र प्रयास भी चल रहे थे, क्योंकि काव्य की भाषा में वह भी ब्रज जैसी मधुर भाषा में सशक्त विरोध नही हो सकता था। क्रान्ति की भाषा बनने का दमखम इसमें नही था। अतः काव्य और गद्य दोनों क्षेत्रों में खड़ी बोली प्रतिष्ठित होने लगी।

गद्यात्मक लेखन के लिए मुंशी सदासुख लाल और सैयद इंशाअल्ला खाँ के नाम अग्रगण्य है। मुंशी सदा सुखलाल ने 'विष्णु पुराण' से प्रसंग लेकर एक ग्रन्थ की रचना की थी। रचना तो उपलब्ध नहीं पर बाद के साहित्यों में उसका उल्लेख मिलता है।

इंशा अल्ला खाँ ने 'उदयभान चरित' या 'रानी केतकी की कहानी' की रचना की। लल्लू लाल ने खड़ी बोली गद्य में 'प्रेमसागर' और सदल मिश्र ने नासिकेतोपाख्यान की रचना की। इनकी भाषा बोलचाल की भाषा थी व अधिक व्यवहारिक थी। ध्यातव्य हो कि ये दोनों विद्वान फोर्ट विलियम कालेज में अध्यापन का कार्य करते थे। पश्चिमी सभ्यता एवं संस्कृति के सम्पर्क में आने के कारण एक विशेष आलोचनात्मक तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण मिला, फलतः विश्व कथा साहित्य के प्रभाव से हमारा साहित्य भी अछूता न रहा। फिर भी हमारे हिन्दी साहित्य पर विशेषकर कथा साहित्य पर संस्कृत काल के साहित्य का काफी अर्से तक व्यापक प्रभाव रहा जो किसी न किसी रूप में अब भी विद्यमान है।

विद्वानों ने सुविधा की दृष्टि से हिन्दी कथा साहित्य को कई चरणों में विभक्त करके देखने का प्रयास किया है। डॉ0 विवेकी राय ने हिन्दी कहानी के विकास रूपो में हैं परन्तु पद्यात्मक अधिक हैं। मुसलमान जब

को छः भागों में बांटा जाना उचित माना है इनके अनुसार ये छः भाग हैं–

आरम्भिक कहानियों का काल–		सन् 1900 से पूर्व
द्विवेदी युग	–	1900 से 1916 तक
प्रेमचन्द युग	–	1916 से 1936 तक
प्रेमचन्दोत्तर काल	–	1936 से 1950 तक
नयी कहानी का दौर	–	1950 से पश्चात
नवीनतम प्रवृत्ति विकास	–	1960 के बाद[2]

अधिकांश विद्वान सन् 1900 ई0 से हिन्दी कहानी का वास्तविक आरम्भ मानते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल भी हिन्दी साहित्य की आधुनिक ढंग की कहानियों का प्रारम्भ सरस्वती के प्रकाशन वर्ष (1900ई0) में मानते हैं। डा0 महेश चन्द्र दिवाकर भी इसी वर्ष को हिन्दी कहानी का प्रारम्भ मानते हुए हिन्दी कहानी विकास को मुख्यरूप से दो प्रधान खण्डों में विभाजित किया है।

1. बीसवीं शताब्दी पूर्वार्द्ध की हिन्दी कहानियां (सन् 1900 से 1950ई0)
2. बीसवीं शताब्दी उत्तरार्द्ध की हिन्दी कहानियां (सन् 1951 से आज तक)

प्रथम खण्ड को दिवाकर जी ने चार सोपानों – प्रथम (1900 –1910), द्वितीय (1911 –1919), तृतीय (1920 –1935) तथा चतुर्थ (1936 –1950) तथा द्वितीय खण्ड को 1950 –60, 1961 –1975 तथा 1975 – अब तक तीन सोपानों में बाँटकर विधिवत अध्ययन किया है।

हिन्दी कथा साहित्य के सम्पूर्ण इतिहास में जिस एक कथाकार को धुरी के रूप में रखा गया है वे हैं उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द, जिन्होनें कहानी को व्यापक समाज से जोड़ा और कहानी के क्षेत्र में नवयुग का सूत्रपात ही नही बल्कि ऐसा मानक स्तम्भ खड़ा किया जिसकी ओर देखे बिना आगे आने वाला कोई साहित्यकार अपनी कलम चला नही पाता।''[3]

जब किस्सागोई की बात उठती है तो प्रेमचन्द और भी महत्वपूर्ण हो जाते हैं। प्रेमचन्द के कथा साहित्य को यदि केन्द्र बिन्दु कहा गया तो रंच मात्र की अतिशयोक्ति नहीं है। ज्यादातर विद्वानों ने प्रेमचन्द को कथा–साहित्य का मानक आधार बिन्दु मानकर हिन्दी कहानी विकास को रेखांकित करने का प्रयास किया है जो मेरे विचार से उचित है। मुख्य रूप से प्रारम्भ से आज तक के हिन्दी कहानी के कालखण्ड को हम तीन भागों में बाँट सकते हैं–

प्रेमचन्द पूर्व काल (प्रारम्भ से 1915 तक)
प्रेमचन्द काल (सन् 1916ई0से 1936ई0तक)
प्रेमचन्दोत्तर काल (सन् 1936 के बाद)

(इस अध्ययन में हम केवल प्रेमचन्द काल तक की कहानियों का विवेचना एवं विश्लेषण का प्रयास करेगें)

सन् 1916 ई0 में प्रेमचन्द हिन्दी कहानी क्षेत्र में अवतरित हुए उसके पूर्व वे उर्दू भाषा में कहानियां लिखते थे। सर्वप्रथम हम प्रेमचन्द के पूर्व की परम्परा पर एक दृष्टिपात करते हैं।

''वैसे तो हिन्दी कहानी का वास्तविक विकास आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के सम्पादकत्व में प्रकाशित

होने वाली पत्रिका "सरस्वती" के प्रकाशन वर्ष सन् 1900 से माना जाता है क्योंकि उसके प्रकाशन वर्ष के प्रथम वर्ष से एक डेढ़ दशक के भीतर उसमें जो कहानियां प्रकाशित हुई हैं उन्हें लेकर ही प्रथम कहानी का विवाद चलता है।''[4] परन्तु भारतेन्दु युग या उसके पूर्व के साहित्य का अध्ययन करें और अनूदित रचनाओं को छोड़ भी दें तो देखने में आता है कि ''उस समय की कुछ मौलिक गद्य कथाएं ऐसी है जिनमें पुरानी परम्परा से भिन्न प्रकार का कहानीपन है तथा इसी कारण से हिन्दी कहानी के आरम्भ के सन्दर्भ को इनसे जोड़ा जाना वाँछनीय है।''[5] किसी भी विधा का विकास एकाएक नही हो गया। कब किसी विधा का आविर्भाव हुआ ठीक ढंग से एक निश्चित तिथि नही आँकी जा सकती । उसके बीज बहुत पहले ही पड़ जाते है। धीरे–धीरें अंकुरित होते बढ़ते हैं और जब उसमें हरियाली आ जाती है तभी लोगों को दिखायी पड़ने लगती है। ठीक यही स्थिति हिन्दी कहानी के साथ भी हुआ इसलिए कुछेक विद्वान 'सरस्वती' के प्रकाशन के पूर्व भी हिन्दी कहानी के अंकुरण को ढूँढ़ने का प्रयास किया है और उस समय के कथात्मक तत्वों व संदर्भो को हिन्दी कहानी का पूर्वाभास नाम दिया है। कुछ लोगों ने भारतेन्दु की रचना 'एक अद्भुत अपूर्ण स्वप्न', 'हिन्दी प्रदीप', 'ब्राह्मण' आदि पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित गप्पाष्टकों, इंशा अल्ला खां लिखित 'रानी केतकी की कहानी' (लगभग सन् 1800 और 1808 के बीच लिखित राजा शिव प्रसाद 'सितारे हिन्द' का "राजा भोज का सपना" (सन् 1856 ई0 से) वीर सिंह का वृतान्त, 'आलसियों का कोड़ा' तथा गौरीदत्त कृत 'देवरानी जेठानी की कहानी' (सन् 1870) राधाचरण गोस्वामी की यमलोक की यात्रा इत्यादि रचनाओं को हिन्दी कहानी का पूर्वाभास माना है। जबकि इन्हें कहानी का पूर्वाभास मानना बिल्कुल गलत है। इन्हें हिन्दी की प्रारम्भिक कहानियों का नाम दिया जा सकता है। वास्तव में देखा जाय तो ये रचनाएँ कहानी के तौर पर लिखी गयी हैं और इनमें कथात्मकता, आख्यानात्मकता का गुण पूरी तरह से है।[6] कथानक संघटन, घटना –विन्यास एवं चरित्र चित्रण योजना तथा सांकेतिकता आदि विशेषताओं का पूर्णरूपेण प्रस्फुटन भले ही न हो पाया हो पर इनके कहानीपन को नकारा नही जा सकता। इनका अवलोकन करने पर स्पष्ट हो जाता है। भाषा के दृष्टिकोण से भले ही इन्हें अनगढ़ अपरिपक्व कहा जाय, आधुनिकता के बिन्दु भले ही इनमें न दिखाई पड़े पर जिन उद्देश्यों को लेकर लिखी गईं उसको सही तरह संप्रेषित करने में सफल हैं। इनकी सहजता ही इनकी विशेषता है। ये 'गल्प' की काल्पनिकता से भरी हैं। इनमें अपनी पूर्ववर्ती परम्परा के अनेक गुणों की झलक मिलती है, उन प्रवृत्तियों की स्पष्ट छाप है। जहां तक भारतेन्दु मण्डल के निबन्धकारों के निबन्धों की बात है, इन निबन्धों को देखें तो हम पायेंगें कि उनमें एक प्रकार की गल्पात्मकता है। उन निबन्धों के बीच –बीच में सन्दर्भ गाथाओं का क्रम उनके गल्पात्मक होने का जीवन्त प्रमाण है। अतः यदि यह माना जाये कि हिन्दी कहानी के आरम्भिक सूत्र इन निबन्धों और काल्पनिक गाथाओं के मुल में जड़ी भूत है तो इसे केवल अतिशयोक्ति के अनुमान की अन्तिम सीमा नही मान लेना चाहिए।[7] हिन्दी की इन आरम्भिक कहानियों पर "मानवेतर सृष्टि की कहानियां" का आरोप लगाया जाता है। मेरे विचार से यह सही नही है। गंगा प्रसाद विमल की दृष्टि में कोई भी सार्थक रचना अपने भीतर उस समसामयिक सत्य को स्थापित कर देती है जो उस काल का मुख्य स्वर होता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि समग्र उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध का मूल स्वर सुधारवाद की कामना से भरा है। यह सुधारवाद क्यों? ''गौरांग जाति के अंहकार, सभ्य होने के दावों और उच्चता की प्रतीतियों के सम्मुख अपने जातीय गौरव की पुनर्प्रतिष्ठा अत्यावश्यक थी। भारतीय जननेताओं ने भारत को मानवीयता की प्रतिछवि इसी के बीच आविष्कृत की है अतः ऐसे मानवीय सत्य को अति मानवीय छद्म के द्वारा व्यक्त करने का कार्य तस्तुतः एक कला कही जानी चाहिए।''[8]

इस तरह हम देखते हैं कि हिन्दी का आरम्भ अपनी आख्यान दृष्टि के कारण अतीत साहित्य की पुरातन परम्परा से जुड़ा है। ''यह आख्यान परम्परा अपने 'प्रयोजनवती चरित्र' के कारण कथा कहानियों में बाद तक काफी सक्रिय रही परन्तु उन्नीसवीं सदी में गद्य के विकास ने 'आख्यान' परम्परा का स्थान लेकर सामान्य मानवीय वास्तविकता को रचना का लक्ष्य बनाया।''[9] इस काल की कहानियां ज्यादातर लोक कथा, परीकथा, पौराणिक गाथा, उपन्यासवार्ता तथा जीवनी आदि के रूप में प्रचलित रहीं।

हिन्दी कहानी के स्वरूप को बदलकर नये शिल्प में आधुनिकता के बिन्दु को तलाशती हुई कहानियों को स्थापित करने तथा कहानी सृजन को एक नये दृष्टिकोण से सम्पन्न करने का कार्य प्रेमचन्द के पूर्व जिन पत्र पत्रिकाओं ने किया उनमें दो पत्रिकाएं सर्वाधिक जिम्मेदार हैं– 'सरस्वती' और 'इन्दु'

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के कुशल सम्पादकत्व में निकलने वाली 'सरस्वती' तथा जयशंकर प्रसाद के सम्पादकत्व में प्रकाशित 'इन्दु' पत्रिका ने हिन्दी कहानी के विकास में मूल्यवान योगदान किया। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के महत् योगदान के कारण ही हिन्दी कहानी साहित्य के इतिहास में यह द्विवेदी काल के नाम से जाना जाता हैं। 'सरस्वती' और 'इन्दु' के माध्यम से तत्कालीन सुप्रसिद्ध कथाकारों की अनेक कहानियाँ प्रकाश में आयीं जिनमें कुछ प्रमुख कहानियां निम्न हैं –

1. इन्दुमती– किशोरी लाल गोस्वामी (सन् 1900 ई0)
2. चन्द्रलोक की यात्रा – बाबू केशव प्रसाद सिंह (सन् 1900 ई0)
3. मन की चंचलता–माधव प्रसाद मिश्र (सन् 1901 ई0)
4. गुलबदन–किशोरीलाल गोस्वामी (सन् 1902 ई0)
5. मालगोदाम की चोरी–गोपाल राम गहमरी (सन् 1902 ई0)
6. प्लेग की चुड़ैल–भगवान दास जी (सन् 1902 ई0)
7. ग्यारह वर्ष का समय –आ0 रामचन्द्र शुक्ल (सन् 1903 ई0)
8. पण्डित और पण्डितानी–गिरजादत्त बाजपेयी (सन् 1903 ई0)
9. दुलाई वाली –बंग महिला (सन् 1907 ई0)
10. गुलबहार – किशोरी लाल गोस्वामी (सन् 1907 ई0)

11. राखीबन्द भाई –वृन्दावन लाल वर्मा (सन् 1909 ई0)
12. रक्षाबन्धन –विश्वम्भर नाथ शर्मा कौशिक (सन् 1913 ई0)
13. उसने कहा था–चन्द्रधर शर्मा गुलेरी (सन् 1915 ई0)
14. ग्राम – जयशंकर प्रसाद (सन् 1911 ई0)
15. पिकनिक–जी0पी0 श्रीवास्तव(सन् 1911 ई0)
16. सुखमय जीवन–चन्द्रधर शर्मा गुलेरी (सन् 1911 ई0)
17. रसिया बालम, मदन मृणालिनी–जयशंकर प्रसाद (सन् 1912 ई0)
18. कानों में कंगना –राधिका रमण सिंह (सन् 1913 ई0)
19. विधवा तस्कर –ज्वाला दत्त शर्मा (सन् 1914 ई0)

इनके अलावा माधव प्रसाद मिश्र, मैथिलीशरण गुप्त, महावीर प्रसाद द्विवेदी, स्वामी सत्यदेव, राधाकृष्ण दास, पार्वतीनन्दन इत्यादि कहानीकारों की कहानियां भी प्रकाश में आयीं ।

इन कहानियों में से आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और डा0 श्री कृष्ण लाल ने 'इन्दुमती;– लक्ष्मीनारायण लाल ने 'ग्यारह वर्ष का समय' रायकृष्ण दास तथा आ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'दुलाई वाली' को हिन्दी की सर्वप्रथम मौलिक कहानी माना है। इसके पीछे विद्वानों के अपने अपने तर्क व विचार हैं। वस्तुतः इस विवाद में न पड़कर तत्कालीन कहानियों की विकास रेखा को समझना ही अधिक समीचीन होगा।

इस काल अर्थात प्रेमचन्द की पूर्व की कहानियों को आदर्शवादी कहानियाँ कहा जा सकता है। कहानी लेखक आदर्श चरित्र की सृष्टि में कल्पना का प्रयोग करता है और बहुधा संयोग पर आधारित भी हो जाती हैं। उनमें अनुरंजन कारी आकर्षण के साथ साथ कृत्रिमता का आभास समान्तर चलता है।[10] चन्द्रधर शर्मा गुलेरी द्वारा लिखित कहानी "उसने कहा था" इस काल की सर्वाधिक प्रसिद्ध कहानी है। इसकी अन्विति स्वाभाविक न होकर संयोग पर आधारित दृष्टिगोचर होती है। इस काल की कहानियों का अध्ययन करें तो हम पाते हैं कि इनमें भरपूर किस्सागोई है। सामाजिक कहानियों के अतिरिक्त ऐतिहासिक, पौराणिक, जासूसी, हास्य व्यंग और फैण्टसी रूप में कहानी की शुरूआत हुई किन्तु आदर्श केन्द्रीयता सर्वत्र अपने स्थान पर प्रतिष्ठित रही।[11] प्रेम और मनोरंजन प्रधान जासूसी एवं साहस प्रधान कहानियों के सृजन के साथ अन्य विविध प्रयोग हुए। इस काल में प्रसाद जी ने भावात्मक कहानियों का सृजन किया उनकी कहानियां रागात्मक होने के कारण भाव्यात्मक हो गयीं। परन्तु संवेदना की दृष्टि से सर्वाधिक धनी कही जा सकती हैं। इस काल की कहानियों का मूल मंत्र सामाजिक आदर्श, नैतिक उत्थान, स्नेह, करूणा तथा भावात्मक लगाव था। इसका सबसे बड़ा कारण शायद यह था कि इस काल के प्रायः समस्त कहानीकार किसी न किसी रूप में सामान्य जनजीवन , जन साहित्यिक, जन संस्कृति और ग्रामों से सम्बन्धित थे।

डॉ0 परमानन्द श्रीवास्तव ने पूर्व प्रेमचन्द युग की रचनात्मक प्रवृत्तियों पर विचार करते हुए लिखा है –"यह युग कल्पना विलास का युग है तथा इस युग की कहानी में मनौवैज्ञानिक यथार्थ के मुक्ति संगत बोध की अनुभूति का नितान्त अभाव है। कहानी की रचना प्रक्रिया की वास्तविक चेतना से अनभिज्ञ इस युग के कहानी लेखकों ने (जिनमें लल्लू लाल, सदल मिश्र, इंशा अल्ला खां से लेकर किशोरी लाल गोस्वामी आदि तक के नाम लिये जा सकते हैं) अप्रकाशित घटनाओं के समूह को ही कहानी का पर्याय मान लिया है।

आकस्मिक नही है कि इस युग की अधिकांश कहानियां 'कुतूहल' को अपना अनन्य प्ररेणा स्रोत मानती हैं। इंशा अल्ला की रानी केतकी की कहानी, किशोरीलाल गोस्वमी की इन्दुमती, रामचन्द्र शुक्ल की ग्यारह वर्ष का समय, केशव प्रसाद सिंह की आपत्तियों का पर्वत या चन्द्रलोक की यात्रा, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की उसने कहा था आदि में कहानीकारों ने अप्रत्याशित घटना चक्रों का कुतूहलपूर्ण उपयोग ही रचनात्मकता का परम साध्य मान लिया है।[12] इस प्रकार हम देखते हैं कि इस काल की अधिकांश कहानियों का प्रयोजन अदभुत तत्व की सृष्टि करना भी है। ज्यादातर इनका प्रारम्भ अतिरंजित कल्पना या अतिरंजना से होता है और समाप्ति भी काल्पनिक आदर्श से होती है। इसके अलावा इस काल में किस्सागोई के संयोग तत्व या आकस्मिकता का अत्यधिक संग्रह परिलक्षित होता है क्योंकि इस युग के रचनाकारों ने उसे ही कला का परम आदर्श मान लिया है।[13]

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि हिन्दी की आरम्भिक कहानियों में किस्सागोई के तत्वों यथा अतिरंजना, कल्पना, संयोग, आकस्मिकता, कौतूहल, अलौकिकता इत्यादि की प्रचुरता है। इसी कारण पाठक को पूरी तरह आकर्षित करती हैं। इनके लिखित रूप में भी वाचिक धर्म परिलक्षित होता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *डॉ0 केशरी नारायण शुक्लः कथा मंजरी भूमिका पृ0 15*
2. *हिन्दी कहानी समीक्षा और सन्दर्भ (हिन्दी कहानीः उद्भव एवं विकास, डा0 विवेकी राय पृ0सं0 172*
3. *बीसवीं शती की हिन्दी कहानी का समाज मनौवेज्ञानिक अध्ययन–डॉ0 महेश चन्द्र दिवाकर, पेज 03। लोकवाणी संस्थान शाहदरा दिल्ली, प्र0सं0 1992।*
4. *हिन्दी कहानी समीक्षा और सन्दर्भ डॉ0 विवेकी राय पृ0 172*
5. *हिन्दी कहानी समीक्षा और सन्दर्भ (हिन्दी कहानी : उद्भव एवं विकास डॉ0 विवेकी राय पृ0 172।*
6. *बीसवी शती की हिन्दी कहानी का समाज मनौवेज्ञानिक अध्ययन डॉ0 महेश दिवाकर, पेज 22। लोक वाणी संस्थान, शाहदरा दिल्ली, प्र0सं0 1992।*
7. *आधुनिक हिन्दी कहानी संपादक गंगाप्रसाद विमल(निबन्ध–आधुनिक हिन्दी कहानी एक प्रारम्भिक निबन्ध पेज–2*
8. *आधुनिक हिन्दी कहानी संपादक गंगाप्रसाद विमल(निबन्ध–आधुनिक हिन्दी कहानी एक प्रारम्भिक निबन्ध पेज –4*
9. *आधुनिक हिन्दी कहानी संपादक गंगाप्रसाद विमल(निबन्ध–आधुनिक हिन्दी कहानी एक प्रारम्भिक निबन्ध पेज –5*
10. *हिन्दी कहानीःसमीक्षा और सन्दर्भ(हिन्दी कहानीःउद्भव एवं विकास) डॉ0 विवेकीराय पृ0173*
11. *वही पृ0 173 –174*
12. *हिन्दी कहानी की रचना प्रक्रियाः परमानन्द श्रीवास्तव पेज –37–38*
13. *हिन्दी कहानी की रचना प्रक्रियाः परमानन्द श्रीवास्तव पेज –79*